नृत्य और नारी

डॉ. वन्दना चौबे
एसोसिएट प्रोफेसर, कत्थक नृत्य
वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

नृत्य एक ऐसा विषय है जिसकी कल्पना करते ही नारी की छवि स्वयं ही मानस पटल पर आ जाती है। क्योंकि नारी शृंगार रस, कैशिकी वृत्ति माधुर्य व लास्य की अधिष्ठात्री है, और नृत्य एक माधुर्यपूर्ण कला है, सौदर्न्य बिना नृत्य व्यायाम का रूप धारण कर लेता है यदि उसमें मनोहरपूर्ण आंगिक संचालन एवं शृंगारिक भावों की अभिव्यक्ति का अभाव हो। जो कि नारी बिना सम्भव नहीं है। नृत्य के लिए जिस कोमल प्रकृति, लचीले अंगों और सौन्दर्य की आवश्यकता होती है, वह उन्हें प्रकृति प्रदत्त है। नटराज शंकर नृत्य कला के जनक होकर भी पूर्णतया पार्वती के लास्य से प्राप्त करते हैं। अर्थात् ताण्डव का सौन्दर्य भी पार्वती के लास्य के कारण ही निखरता है। प्राचीनकाल से ही नृत्यकला एवं नारी का घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। वैदिक युग से ही संगीत में दक्षता नारी का विशेष गुण समझा जाता रहा है। वैदिक काल में गृहस्थ कार्यों के अतिरिक्त संगीत की शिक्षा ही उसकी सांस्कृतिक उन्नति का आधार थी। ऋग्वेद में नारी के गान एवं नृत्य का उल्लेख प्राप्त होता है–

"समुत्वा धीमिरस्वरन्हिन्वती स।
प्रजामयः विप्रभाजा विवस्वतः।।1
तथा
"ऋषि पेशांसि वपेत नृतुरि।
वापोशतुर्वक्ष उस्त्रोव वर्जदम" ।2

यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में भी नृत्य व संगीत में नारी की भूमिका का वर्णन प्राप्त होता है। 3 वैदिक युग में स्त्रियां संगीत में निपुण न होती तो उनको वेदों में इतना महत्वपूर्ण स्थान न दिया जाता। 'शतपथ ब्राह्मण', 'तैतरीय संहिता, और 'मैत्राणी संहिता' आदि ग्रंथों में सामगान स्त्रियों का विशेष कार्य माना जाता था एवं नृत्य में उनकी बहुत रूचि थी। सूत्र साहित्य समाज के धार्मिक पक्ष को उजागर करता है। उससे यह स्पष्ट होता है कि सामगान में पुरूषों के साथ उनकी स्त्रियां तदनुकूल गायन एवं वादन करती थी।5 दास कुमारियां भी यज्ञ के अवसर पर 'उदकुम्भ शीर्ष'4 नृत्य तथा गाथाओं का गायन करती थी। राज्य में नर्तकियों का विशेष स्थान था। राजाओं की पुत्रियां भी संगीत एवं नृत्य का ज्ञान रखती थी।6

प्रागैतिहासिक काल से प्रवाहित नृत्य की धारा रामायण काल में भी अपनी सहज गति से आगे बढ़ती गयी जिसका उत्तरदायित्व नारी ने ही वहन किया। रावण की पत्नी मन्दोदरी तथा अन्तःपुर की अन्य स्त्रियाँ भी इन कलाओं में निपुण थी।7 दिव्यांगना अप्सराओं एवं गन्धर्वों के नृत्य गीत का रामायण में प्रचुर उल्लेख देखने को मिलता हैं राम लक्ष्मणादि चारों भाईयों के विवाह के उपलक्ष्य में अप्सराओं ने नृत्य किया था– ननृतुश्चाप्सरः सङ्घा गन्धर्वाश्च जगुः कलम्।8 भारद्वाज के आश्रम में भरत तथा उसकी सेना के अतिशय संस्कार में भी अप्सराओं का नृत्य आयोजन हुआ। 'प्रववुश्चोत्तमा वाता ननृतुश्चाप्सरोगणाः। प्रजगुर्देवगन्धर्वा वीणाः प्रमुमुचः स्वरान्।9 पुलस्त्य मुनि के आश्रम में दिव्यागनाऐं, नाग कन्याएं एवं अप्सरायें अनेक प्रकार के नृत्य करती थी10 तथा विभीषण की तप समाप्ति पर भी अप्सराओं ने नृत्य किया – 'समाप्ते नियमे तस्य ननृतुश्चाप्सरोगणाः।11 बाल काण्ड के 32वे सर्ग में एक कथा है कि राजर्षि कुशनाभ तथा घृताची अप्सरा से सौ कन्याएं उत्पन्न हुयी ये रूप–यौवन सम्पन्न कन्याएं नृत्य, गान में भी कुशल थी।12 जब भद्र परिवारों की स्त्रियों द्वारा कला का इतना मान हो तब व्यावसायिक नट–नर्तकी कितनी बड़ी संख्या में नृत्य की साधना में लगे होंगे इसका अनुमान इसी विवरण से लगाया जा सकता है कि गणिकाओं और नाटक मण्डिलियों से सारी अयोध्या नगरी घिरी हुई थी "वधूनाटकसंघैश्च संयुक्तां सर्वतः पुरीम"13

रामायण काल से महिलाओं में नृत्य के प्रति जो रूचि जाग्रत हुयी थी उसका पूर्ण विकास महाभारत काल में हुआ। कृष्ण के प्रपौत्र प्रद्युम्न की पत्नी उषा ने 'लास्य' नृत्य की शिक्षा स्वयं भगवती पार्वती से प्राप्त की थी। तथा उसे द्वारिका की रमणियों को सिखाया था।14 अर्जुन ने वृहन्नला बनकर नृत्य की शिक्षा राजा विराट की पुत्री उत्तरा को प्रदान की थी।15 क्षत्रिय स्त्रियां नृत्य व संगीत कला मर्मज्ञा तो ही थी अभिजात वर्ग भी इससे अछूता नहीं था। 'देवयानि' के भी संगीत का उल्लेख प्राप्त होता है। राज्य में नर्तकियां हमेशा ही रहती थीं। यज्ञ, विवाह, पुत्र जन्मोत्सव के समय ये नट–नर्तकियाँ नृत्य व गायन वादन द्वारा अपनी कला का प्रदर्शन करते थे। इस

प्रकार प्रत्येक शुभ अवसर पर इनकी उपस्थिति का उल्लेख प्राप्त होता है।

समाज में स्त्री रूपी नृत्य गुरू का भी सम्मानीय स्थान था। 'वृहन्नला' द्वारा उत्तरा को संगीत शिक्षा इसका प्रमाण है। उस समय नृत्य, गीत उन्नत दशा में था। सभ्य समाज का समादर था संस्कृत और शिक्षा का यह एक आवश्यक अंग समझा जाता था। उस समय राजा लोगों ने नर्तनागार तथा संगीतशाला बनवा रखी थी जिसमें दिन में बालिकाओं को नृत्य, गीत इत्यादि की शिक्षा दी जाती थी और रात को वे अपने घर चली जाती थी।16 अतः उस काल में भी नारियों का संगीत व नृत्य में महत्वपूर्ण योगदान था।

बौद्धकाल में भी नारियों की संगीत व नृत्य के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका थी। 'थेरी गाथा' नामक बौद्ध ग्रंथ में 97 विदुषी भिक्षुणियों के गीतों का संग्रह है, जो ज्ञान एवं सदाचारिता की दृष्टि से किसी भी बौद्ध से कम नहीं थी। जैन ग्रंथों में कला को राजश्रय प्राप्त होना वर्णित है। राजा उदयन की पत्नी नृत्य कला विशारद थी। प्राचीन द्रविण संगीत ग्रन्थ 'शिल्पदिकारम' की नायिका माधवी नृत्यांगना एवं संगीतज्ञा थी।

भारतीय इतिहास के स्वर्ण युग गुप्त साम्राज्य में मालविका एवं शर्मिष्ठा ने नृत्य एवं संगीत के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। महाकवि कालीदास द्वारा रचित 'मालविकाग्निमित्रम' में इसके प्रमाण मिलते हैं।

प्राचीन काल में बालिकाओं द्वारा नृत्य भगवान को प्रसन्न करने के लिए किये जाते थे। दक्षिण भारत के मंदिरों की देवदासी प्रथा इसी का प्रतीक है। मंदिरों में ईश्वर की पूजा हेतु तथा उसे प्रसन्न करने के लिए, ईश्वर के समक्ष ये देवदासियां जो बाल्यकाल से ही ईश्वर की पत्नियां कही जाती थीं, नृत्य करती थीं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पहली बार 'देवदासी' शब्द मिलता है। राजतरंगणि, कुट्टनीमतम और कथासरितम इत्यादि साहित्यिक रचनाओं में भी देवदासी शब्द का प्रयोग हुआ है। दक्षिण भारत के चोल राजाओं के काल में छठवीं से तेरहवीं शताब्दी में बड़े–बड़े मंदिरों का निर्माण हुआ जिनमें हिन्दू देवताओं की मूर्तियाँ थीं। विष्णु व शिव के पवित्र तीर्थ स्थलों से ही पवित्र धार्मिक नृत्य विकसित हुआ जो कि कलाओं का संयोग था।

मन्दिरों के नृत्य पवित्र और धार्मिक होते थे। यह नृत्य जिन स्त्रियों को सौंपा गया उन्हें देवदासी या 'देवार अड़पात' अर्थात ईश्वर की आराधिका कहा जाता था। देवलोक में जिस कार्य का सम्पादन रम्भा, उर्वशी, मेनका आदि अप्सराएँ करती थीं, मृत्युलोक में वही कार्य देवदासियों का माना जाता था। ये देवदासियाँ अपने सौन्दर्य तथा नृत्यगान से सबको अभिभूत कर देती थी। ज्ञंसपकें कमेबतपइमे जीमउ ˇ मदरवलपदह जीम पितेज कतवचे वि उवदेवबद तंपद ˇ ˙ ू मसबवउम तमसपमि जव जीमपत जपतमक सपउइे17 दक्षिण भारत व उड़ीसा के मन्दिरों में देवदासियों द्वारा नृत्य व संगीत अनिवार्य धार्मिक क्रिया–कलापों और अनुष्ठानों के एक अंग के रूप में कार्य निष्पन्न करता था। स्कन्द पुराण, पद्म पुराण, विष्णु–पुराण, वामदेव संहिता, नीलाद्रि–महोदय और गोपाल–पल्लव आदि ने देवताओं के प्रसादन के लिए अनिवार्य भेंट के रूप में संगीत व नृत्य को अभिहित किया है। भारत में बिखरे हुए प्राचीन मन्दिरों की दीवारों पर अंकित मूर्तियों में नृत्यकला के अवशेष दृष्टिगोचर होते हैं। इसका एक कारण यह भी है कि हर मंदिर में भगवान की आराधना के समय देवदासियों का नृत्य हुआ करता था। मन्दिरों की दीवारों पर शिलाओं में खुदे हुए अक्षर–लेख भी इस बात को प्रमाणित करते हैं कि कन्याओं द्वारा किया जाने वाला नृत्य भगवान की उपासना का सबसे उत्तम माध्यम था। ब्रह्मेश्वर मन्दिर में खुदे हुए लेख स्पष्ट रूप से वर्णन करते हैं कि ईसा की दसवीं शताब्दी में कलावती देवी ने जो कि केशरी वंश के राजा उद्यतकेशरी की जननी थीं, भगवान शिव की सेवा के लिए सुन्दर नृत्य करने वाली लड़कियों को समर्पित किया था। इन नृत्य बालाओं के चरित्र के सम्बन्ध में कलावती देवी द्वारा किया हुआ एक उल्लेख ब्रह्मेश्वर–मन्दिर की दीवारों पर इस प्रकार अंकित है–

सत्नालक तियूषितांगसुषमा दैदीप्यमाना (व:)
क्रीडन्स्य स्तहितः स्थिरा इव कुवश्रोणी मरावव्याकुलाः।
(सुन्दर्यौक्षि) कनीनिका (का) इव दुशामन्त्रः प्रतिष्ठा
न–णा तस्मलकअनाभ (भ्र) नयना दत्तास्थिया दारिका।।

बारहवीं शताब्दी के मेघेश्वर मन्दिर और दूसरे अनेक मन्दिरों पर खुदे लेख जो अब अनन्द वासुदेव मन्दिर और शोमेश्वर मन्दिर में स्थानान्तरित कर दिए गए हैं, इसी वास्तविकता को प्रमाणित करते हैं कि एक सौ नृत्य बालाएँ इस देवालय को समर्पित थीं–

एतस्मौ हयमेधसे वसुमती विश्रान्त–विद्याबेरी–
विश्रान्ति दधतोः शतं स हि ददौ सारंगशाबीदृशाः
दनदस्योप्रदुशा दृशीव दिशतोः कामस्य सधीवनं–
कागः कामिजनस्य संगमगृहं संगीतकेलिश्रिया।18

मधुकेश्वर मन्दिर में देवदासी–परम्परा की प्रथा को प्रमाणित करने वाला एक उल्लेख विद्यमान है, जिसके अनुसार भगवान त्रिकलिंगदेव (मधुकेश्वर) के भोग के समय पर उनके मनोविनोद के लिए पर्णकुटि नामक एक नृत्यगुरू की तीन पुत्रियाँ नियुक्त की गई थी। नर्तनम् के अनुसार अनंगभीमदेव की पुत्री राजकुमारी चन्द्रिका और पदमावती 'रूपाम्बिका', जो पुरूषोत्तम देव की पत्नी थी। दोनों ही देवदासियाँ हो गई और जगन्नाथ के देवालय में सेवा के लिए स्वयं को समर्पित कर दिया। पौराणिक कवि जयदेव की पत्नी पदमावती जो नृत्य एवं संगीत में दक्ष थी उसने देवदासी के रूप में सेवा करने के लिए जगन्नाथ मन्दिर में अपने आपकों सर्वतोभावेन अर्पित कर दिया। यद्यपि नृत्यकला भगवान की उपासना का सबसे उत्तम माध्यम होने के कारण कन्याओं द्वारा किया जाने वाला नृत्य व भगवत–सेवा पवित्र माना जाता था।

तंजावुर के चोल राजा रय्या के मंदिरों में 400 नृत्यांगनाओं की नियुक्ति का उल्लेख मन्दिर से सम्बन्धित पांडुलिपि में मिलता है। कालिदास ने मेघदूत में उज्जयिनी के महाकाल मन्दिर में नृत्य करने वाली कन्याओं का उल्लेख किया है। सोमनाथ मन्दिर में तो पाँच सौ नृत्य करने वाली स्त्रियों का वर्णन है। नवीं शताब्दी में लिखे गये दक्षिण के कई ग्रन्थों में भी इसका वर्णन है। ये स्त्रियाँ अपने कला के कारण समाज में आदर की पात्री होती थीं।

'पूजिता सा सदा राज्ञा गुणावाम्दश्च सूस्तुता।'

वर्तमान में नृत्यकला का स्वरूप पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरण के द्वारा प्राप्त हुआ है। जिसका उत्तरदायित्व नारी ने वहन किया। इसलिए नृत्य जगत में नारी की महत्ता सिद्ध है। सामाजिक संदर्भों में आज भी यह तथ्य दृष्टांत है कि क्या लड़कियों की तरह नाचते हो? अर्थात नृत्यकर्म लड़कियों या नारी समुदाय के लिए ही जनित है। श्रीकृष्ण और शंकर जी के द्वारा किये गये नृत्यों से सभी नृत्यकलाओं का जन्म हुआ है। चाहे उसका स्वरूप देशी हो या मार्गी परन्तु सभी नृत्यों में नारी की भूमिका से सौन्दर्यबोध का अनुभव होता है। नारी की सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति ने नृत्यकला को जीवंत स्वरूप दिया है।

मुगलों के आगमन से भारतीय परम्परा और संस्कृति का स्वरूप परिवर्तित हुआ। पर्दा प्रथा का प्रचलन प्रारम्भ हुआ जिससे नारी का दायरा सीमित होने लगा। नारी की सामाजिक स्थिति बदलने लगी। नारी का धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन विकट रूप लेने लगा।नारी भोग और वासना का विषय बन गई। नारी की सौन्दर्याकृति को प्रदर्शन की विषयवस्तु बना दिया गया। राजाओं और नवाबों के राजदरबारों में नारी शोभायमान होने लगी।

नर्तकियों को देवालयों से उठाकर शाही दरबारों में लाया गया, वस्तुतः अब महिलायें मंदिर की सेविकाओं के बजाय मुस्लिम दरबारों में राजाओं के मनोरंजन का साधन मात्र बन कर रह गयी। नृत्य व कामकला के शिक्षा की व्यवस्था राज्य की ओर से प्रदान की जाने लगी। अतः इस समय नृत्य में नारी की स्थिति राजसी व तामसी प्रवृत्ति के समीप पहुंच गई। विलासिता के साथ अश्लीलता ने भी कदम रखा। इसके कदमों की आहट सुनकर संभ्रांत परिवारों की महिलाओं पर पटाक्षेप हो गया और उनकी कला चारदीवारी में ही घुटकर रह गई। अब नृत्य विलासी राजाओं और उनका मनोरंजन करने वाली गणिकाओं के मध्य उलझकर रह गया। अतः नृत्य का शनैः-शनैः पतन होने लगा। यदि किसी सभ्य घर की स्त्री के सम्बन्ध में यह पता चले कि वह नृत्य में रूचि रखती है तो वह परिवार वालों के लिए लज्जा की बात समझी जाती थी। ऐसे में केवल नृत्य द्वारा धनोपार्जन करने वाली नारियों ने ही समाज के विरोध को सहते हुए भी कला का प्रदर्शन किया।

ये महिलायें उच्च जाति की नहीं थीं, निम्न जाति की महिलायें ही नृत्य का कार्य करती थीं, उन्हें कार्यक्रम के लिए रूपये दिये जाते थे। नृत्य द्वारा जीविकोपार्जन जो सभ्य समाज की नीति के विरूद्ध था। अतः उच्च वर्ग की स्त्रियों को उन जीविका प्राप्त करने वाली स्त्रियों से भिन्न दर्शाने के लिए समाज ने नृत्य व संगीत की शिक्षा को नारी के लिए अनुचित बताया।

कला की ये अधिष्ठात्रियाँ समाज की कोप दृष्टि से लड़ती तो रही पर इस बाधा ने उसे कलाकार न बनने दिया, वह खुलकर स्वतंत्रता से अपनी कला को न बढ़ा सकी। सभ्य समाज ने उन्हें अपने से दूर भगाया और उनकी कला को उनसे छीनने का प्रयत्न किया, उन्हें समाज से निकाला और अंत में उनकी जीविका का साधन छीनकर उन्हें नीच कर्म करने पर बाध्य किया। उसके पश्चात् उसे नाम दिया गणिका का, उसे वेश्यावृत्ति कहा।

वे गणिका, वरांगना, भोग्या, वैश्या, देवदासी, नायिका, राजनर्तकी के रूप में कभी ठगी जाती रहीं तो कभी अस्मिता के व्यापार में उलझी रहीं, इन्ही उलझती–सुलझती स्थितियों में ये कलाधिष्ठात्रियां अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ नृत्य को समर्पित हो अपना सर्वोच्च प्रदान करने में कहीं शिथिल नहीं पड़ी तथा अपनी सृजनात्मक स्वभाव के अनुरूप वो विरोधाभाषी स्थितियों के बीच से अपनी रचनात्मक प्रवृत्ति का परिचय देती हुई मार्ग प्रशस्त करती रही। नारी के लिए कवि ने ठीक ही तो कहा है–

"बिखेरो तुम नयी मुस्कान फिर जग में सवेरा हो,
घृणा का पाप धोकर, स्नेह धरा में नहाओ तुम।
पुरानी लीक पर चलना तुम्हें शोभा नहीं देता,
नए विश्वास लेकर पथ नया बनाओ तुम।"

इस अवधारणा की पुष्टि करती हुई उच्च वर्ग की कुछ कन्याओं ने नृत्य में उस समय पदार्पण किया, जब कुलीन वर्ग की कन्याओं का नृत्य में आना अभिशाप माना जाता था जिनमें मैडम मेनका, रूकमणि देवी, अरूण्डेल, मृणालिनी–साराभाई, सितारा देवी, सविता बेन, रोहिणी भाटे, दमयन्ती जोशी इत्यादि का प्रवेश नृत्य जगत में 'मील का पत्थर' साबित हुआ साथ ही अभिजात्य वर्ग की महिलाओं के लिए द्वार खोल दिया। इन नृत्यांगनाओं ने नृत्य शैली को परिष्कृत एवं प्रतिष्ठित करने का कार्य किया। उसे एक

सम्मानित रूप देकर पाठ्यक्रम एवं व्यावसायिक रोजगार परक साधन बना दिया। इन नृत्यांगनाओं ने सामाजिक अवरोधों के बाद भी नृत्य की परम्परा को जीवित रखा।

वर्तमान नृत्य जगत की पृष्ठभूमि का अवलोकन करने पर हम इस तथ्य से अवगत होते हैं कि अनादि काल से महिलायें इस क्षेत्र को अपनी कला से अलंकृत करती रहीं है।

भारतीय महिलाओं ने भगवान के समक्ष जहाँ नृत्य की आराधना की, वहीं दूसरी ओर आज नृत्य की कठिन साधना कर रंगमंच की चुनौति को स्वीकारने में भी पुरूषों से पीछे नहीं रही। गृहस्थी की जिम्मेदारियाँ उनकी कला साधना में विघ्न न बन सकी। फलतः आज वे महिलायें नृत्य गगन में नक्षत्र बनकर सौन्दर्य को द्विगुणित कर रही हैं।

ऐसी महान महिला कलाकारों में – दमयंती जोशी (कथक), पदमश्री संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से सम्मानित। यामिनी कृष्णमूर्ति (भरतनाट्यम) पदमश्री उपाधि। संयुक्ता पाणिग्रही (उड़ीसी नृत्य) पदमश्री, नृत्यशिरोमणि, सिंगारमणि। रूक्मणिदेवी अरूण्डेल (भरतनाट्यम) पदमभूषण, विक्टोरिया रजत पदक, हेम मे रोल ऑफ ऑनर, संसद की उच्च सदन में सदस्य, एशियाटिक सोसाइटी द्वारा 'रविन्द्रनाथ टैगोर वर्थ प्लॉक' आदि पुरस्कारों से सम्मानित। दर्शना झावेरी (मणिपुरी नृत्य) पदमश्री, भारतश्री, नाट्यशिखर, स्वर सदन रत्न,नृत्य मलिका। रोशन कुमारी (कत्थक नृत्य) पदमश्री, नृत्य शिरोमणि, नृत्य–विलास, महाराष्ट्र गौरव सम्मान। शोभना नारायण (कत्थक नृत्य) पदमश्री, राजीवगांधी पुरस्कार, इंदिरा प्रिददर्शिनी सम्मान, जापान के व्हेब पुरस्कार से सम्मानित। सोनल मानसिंह (भरतनाट्यम, ओड़िसी नृत्य) पदमभूषण, पदमविभूषण, कामेश्वरी, हनुमंत सम्मान, संगीतनाटक अकादमी, राजीवगांधी एक्सीलेंस अवार्ड। महिलायें नृत्य की प्रत्येक विधा में शिखर की उंचाईयों को छू चुकी है। पुरूषों के एकाधिकार वाले कथकलि नृत्य पर भी आज महिला कलाकारों ने अपना अस्तित्व जमाया। केरल का ओजपूर्ण नृत्य 'कथकलि' पुरूषों के लिए ही था। किन्तु कनक रेले ने इस पुरूषोचित नृत्य शैली को सीखने का ही साहस नहीं किया बल्कि इसमें उत्कृष्ठता भी हासिल की। आज नृत्य के क्षेत्र में कुछ कर गुजरने का हौसला रखने वाली लड़कियों की संख्या बढ़ रही है। आधुनिक काल में चूंकि स्त्री शिक्षा का अत्यधिक प्रचार हो गया है इस कारण लड़कियां पढ़ाई व नृत्य शिक्षा साथ–साथ ग्रहण करती है। आज नारी वर्ग नृत्य के क्षेत्र में बहुत आगे बढ़ चुका है। टेलीविजन, संगीत सम्मेलन, देश – विदेश के मंच प्रदर्शन में उन्हें सम्मानीय स्थान प्राप्त होता है और आज वह समाज में कलाकार एवं शिक्षिका के रूप में अपना सम्मानपूर्ण स्थान बना रही है। किसी कवयित्री ने नारी को नृत्य–संगीत की परिचारिका के रूप में चिन्हित करते हुए लिखा है–

नारी ही संगीत है जिसके रूप अनूप।
गायन, वादन, नृत्य है उसके ही प्रतिरूप।
उसके ही प्रतिरूप, कंठ में बजती सरगम।
बजने लगते वाद्य, पांव में पायल छम–छम।
उसकी थिरकन देखकर मन हो जाता मस्त।
बच्चे बूढ़े सभी जन, कभी न होते त्रस्त।।

सन्दर्भ ग्रंथ :–

1. निबन्ध संगीत संग्रह – हरिश्चन्द्रश्रीवास्तव पृ.82
2. संगीत मासिक पत्रिका – जनवरी–फरवरी, 1986, पृ.24
3. संगीतशती – जया जैन, पृ.27
4. यह नृत्य आज के समय में सिर पर घड़ा रखकर किये जाने वाले लोक नृत्य के समान है।
5. प्राचीन भारत में संगीत– धर्मावती श्रीवास्तव, पृ.43
6. प्राचीन भारत में संगीत– धर्मावती श्रीवास्तव, पृ.43
7. रामायण 5 / 10 / 37–49
8. बालकाण्ड, सर्ग–73, श्लोक 38,39
9. अयोध्या काण्ड, सर्ग–91, श्लोक 26
10 गायन्त्यो वादन्त्यश्च लासयन्त्यस्तथैव च।। उत्तरकाण्ड–2 / 11
11. उत्तरकाण्ड 10 / 7
12. गायन्तो नृत्यमानाश्च वादयन्त्यस्तु राघव। आमोदं परमं जग्मुर्वराभरणभूषिताः ।। बाल काण्ड 32,13
13. रामायण 1 / 5 / 12
14. **बुद्ध्वाऽथ ताण्डवं तण्डोर्मर्त्येभ्यो मुनियोऽवदन्।**
पार्वती त्वनुशास्ति स्म लास्यं बाणात्मजामुषाम्।।
तथा द्वारवतीगोप्यस्ताभिः सौराष्ट्रयोषितः।
तथाभिस्तु तत्तद्देशीयास्तदाशिष्यन्त योषितः।।
एवं परम्पराप्राप्तमेतल्लोके प्रतिष्ठितम्।।
अभिनयदर्पण श्लोक 5,6,7
15. स शिक्षयामास च गीतवादितं सुतां विराटस्य धनंजयः प्रभुः। सखींश्च तस्याः परिचारिकास्तथा प्रियश्च तासां स बभूव पाण्डवः।। वि. 11 / 12–13
16. यैषा नर्तनशालेह मत्स्यराजेन कारिता। दिवाऽत्र कन्या नृत्यन्ति रात्रौ यान्ति यथागृहम।। वि.प. 22 / 3
17. "वउमद पद मंतसल प्दकपंद "पबपमजपमे , मकपजमक इल ज्ञनजानत्ए चंहम दवण 217
18. "नर्तनम् – हिन्दी अनुवादः – रामसहायन उपाध्या।